जो उससे दूर रहते हैं, दूर से देखते हैं। भीतर प्रवेश करने का साहस करने पर वह सरल ही है। जितनी सरल है, उतनी ही कल्याणकारक भी है।

आचार्य बलदेव उपाध्याय के शब्दों में - 'भारतीय तत्त्वज्ञान तथा धर्म-सिद्धान्तों के मूल स्रोत होने का गौरव इन्हीं उपनिषदों को प्राप्त है। उपनिषद् वस्तुतः वह आध्यात्मिक मानसरोवर है, जिससे ज्ञान की भिन्न-भिन्न सरितायें निकलकर इस पुण्य भूमि में मानव मात्र के ऐहिक कल्याण तथा आमुष्मिक मंगल के लिए प्रवाहित होती हैं। वैदिक धर्म की मूल-तत्त्व-प्रतिपादिका प्रस्थानत्रयी में मुख्य उपनिषद् ही हैं। अन्य प्रस्थान-गीता तथा ब्रह्मसूत्र- उसी के ऊपर आश्रित हैं।' भारतवर्ष में उदय होने वाले समस्त दर्शनों का - सांख्य तथा वेदान्त आदि का ही यह मूल ग्रन्थ नहीं है, अपितु जैन तथा बौद्ध दर्शनों के भी मौलिक तथ्यों की आधारशिला यही है। उपनिषद् का इसीलिए भारतीय संस्कृति से अविच्छेद्य सम्बन्ध है। इनके अध्ययन से इस संस्कृति के आध्यात्मिक रूप का सच्चा परिचय हमें उपलब्ध होता है। इसीलिए जब से किसी विदेशी विद्वान् को इसके पढ़ने तथा मनन करने का अवसर मिला है, तब से वह इनकी समुन्नत विचारधारा, उदात्त चिंतन, धार्मिक अनुभूति तथा आध्यात्मिक जगत् की रहस्यमयी अभिव्यक्तियों की शतमुख से प्रशंसा करता आया है।'

## पाश्चात्य विद्वानों पर प्रभाव

वेदान्त दर्शन की महिमा पर मुग्ध होने वाले विदेशी विद्वानों में सबसे पहले अरबदेशीय विद्वान् अलबरूनी थे। वे ११वीं (ग्यारहवीं) शताब्दी में भारत आये थे। यहाँ आकर उन्होंने संस्कृत भाषा का अध्ययन किया और उपनिषदों की सारस्वरूपा गीता पर वे लट्टू हो गये। यह ज्ञात नहीं है कि इन्होंने उपनिषदों का अध्ययन किया था या नहीं, लेकिन गीता की जो प्रशंसा उन्होंने की है, उसे उपनिषदों की ही प्रशंसा समझनी चाहिए।

वैदिक साहित्य के साथ पाश्चात्य विद्वानों का प्रथम परिचय उपनिषदों के माध्यम से ही हुआ। सम्राट् शाहजहाँ के ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोह अपनी धर्म सम्बन्धी उदारता के लिए भारत के इतिहास में प्रसिद्ध हैं। सन् १६४० ईस्वी में जब दारा कश्मीर में थे, तब उन्हें सर्वप्रथम उपनिषदों की महिमा का पता लगा। उन्होंने काशी से पण्डितों को बुलाया और उनकी सहायता से पचास उपनिषदों का फारसी में अनुवाद किया। १६५७ ईस्वी में यह अनुवाद पूरा हुआ। इसके प्रायः तीन वर्ष के बाद सन् १६५९ ईस्वी में औरंगजेब के द्वारा दाराशिकोह मारे गये।

अकबर के समय में भी (१५५६-१५८५) कुछ उपनिषदों का अनुवाद हुआ था; परन्तु अकबर अथवा दारा द्वारा सम्पादित इन अनुवादों के प्रति सन् १७७५ ईस्वी से पहले तक किन्हीं भी पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि आकर्षित नहीं हुई। अयोध्या के नवाब सुजाउद्दौला की राजसभा के फारसी रेजीडेंट श्री एम० गेंटिल ने सन् १७७५ में प्रसिद्ध यात्री एंक्वेटिल डुपेर्रन (Anquetil Duperron) को दाराशिकोह के द्वारा सम्पादित उक्त फारसी अनुवाद की एक पाण्डुलिपि भेजी। एंक्वेटिल डुपेर्रन ने कहीं से एक दूसरी पाण्डुलिपि प्राप्त की और दोनों को मिलाकर फ्रेंच तथा लैटिन भाषा में उस फारसी अनुवाद का पुनः अनुवाद किया। लैटिन अनुवाद सन् १८०१-१८०२ में 'औपनेखत' (OUPNE KHAT) नाम से प्रकाशित हुआ। फ्रेंच अनुवाद नहीं छपा।

उक्त लैटिन अनुवाद के प्रकाशित होने पर पाश्चात्य पण्डितों की दृष्टि इधर कुछ आकर्षित तो हुई, किन्तु अनुवाद का अनुवाद होने के कारण वह इतना अस्पष्ट और दुर्बोध हो गया था कि उसका मर्म समझकर रसास्वादन करना सहज नहीं था। जर्मनी के सुप्रसिद्ध दार्शनिक श्री अर्थर शोपेन हॉवर ने (सन् १७८८-१८६०) बहुत कठिन परिश्रम करके

उक्त अनुवाद का अध्ययन किया और मुक्त कण्ठ से यह घोषणा की, कि 'मेरा अपना दार्शनिक मत उपनिषद् के मूल तत्त्वों के द्वारा विशेष रूप से प्रभावित है।' इस प्रसंग में मनीषी शोपेन हॉवर ने उपनिषद् के महत्त्व और प्रभाव के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है, वह विशेष ध्यान देने योग्य है-

'मैं समझता हूँ कि उपनिषद् के द्वारा वैदिक साहित्य के साथ परिचय लाभ होना वर्तमान शताब्दी (१८१८) का सबसे अधिक परम लाभ है, जो इसके पहले किन्हीं भी शताब्दियों को नहीं मिला। मुझे आशा है, १४ वीं शताब्दी में ग्रीक साहित्य के पुनरभ्युदय से यूरोपीय साहित्य की जो उन्नति हुई थी, संस्कृत साहित्य का प्रभाव उसकी अपेक्षा कम फल उत्पन्न करने वाला नहीं होगा। यदि पाठक प्राचीन भारतीय विद्या में दीक्षित हो सके और गम्भीर उदारता के साथ उसे ग्रहण कर सके, तो मैं जो कुछ कहना चाहता हूँ, उसे वे अच्छी तरह समझ सकेंगे। उपनिषद् में सर्वत्र कितनी सुन्दरता के साथ वेदों के भाव प्रकाशित हैं, जो कोई भी उक्त फारसी-लैटिन अनुवाद का, ध्यान देकर अध्ययन करके उपनिषद् की अनुपम भावधारा से परिचित होगा, उसी की आत्मा के गम्भीरतम प्रदेश तक में एक हलचल मच जाएगी। एक एक पंक्ति कितना दृढ़, सुनिर्दिष्ट और सुसमञ्जस अर्थ प्रकट कर रही है। प्रत्येक वाक्य से कितना गम्भीरता पूर्ण विचार समूह प्रकट हो रहा है, सम्पूर्ण ग्रन्थ कैसे उच्च, पवित्र और ऐकान्तिक भावों से ओतप्रोत है। सारे पृथ्वी मण्डल में मूल उपनिषद् के समान इतना फलोत्पादक और उच्च भावोद्दीपक ग्रन्थ कहीं भी नहीं है। इसने मुझको जीवन में शान्ति प्रदान की है और मरण में भी यह शान्ति देगा।'

शोपेन हॉवर ने अन्यत्र कहा था- ''भारत में हमारे धर्म की जड़ें कभी नहीं गड़ेंगी। मानव जाति की 'पुराणी प्रज्ञा' गैलीलियो की घटनाओं से कभी निराकृत नहीं होगी। वरन् भारतीय प्रज्ञा की धारा यूरोप में प्रवाहित होगी एवं हमारे ज्ञान और विचार में आमूल परिवर्तन ला देगी।'' उनकी यह भविष्यवाणी सफल हुई। स्वामी विवेकानन्द की अमेरिकन शिष्या ''साराबुल'' ने अपने एक पत्र में लिखा था कि ''जर्मनी का दार्शनिक सम्प्रदाय, इंग्लैण्ड के प्राच्य पण्डित और हमारे अपने देश के एमरसन आदि साक्षी दे रहे हैं कि पाश्चात्य विचार आजकल सचमुच ही वेदान्त के द्वारा अनुप्राणित हैं।'' कहते हैं कि शोपेन हॉवर की मेज पर उपनिषदों की एक लैटिन प्रति हमेशा रहती थी और वे सोने से पहले उसमें से ही अपनी प्रार्थनाएँ किया करते थे। शोपेन हॉवर ने उपनिषदों के सम्बन्ध में लिखा है -''उपनिषदों के प्रत्येक वाक्य में से गहन, मौलिक और उदात्त विचार फूटते हैं और सभी कुछ एक उच्च, पवित्र और एकाग्र भावना से व्याप्त हो जाता है। समस्त संसार में उपनिषदों जैसा कल्याणकारी और आत्मा को उन्नत करने वाला कोई और ग्रन्थ नहीं है। ये सर्वोच्च प्रतिभा के प्रसून हैं। देर-सबेर ये लोगों की आस्था का आधार बनकर रहेंगे।''

सन् १८४४ में बर्लिन में श्री शेलिंग महोदय की उपनिषद् सम्बन्धी व्याख्यान माला को सुनकर प्रसिद्ध पाश्चात्य पण्डित मैक्समूलर का ध्यान सबसे पहले संस्कृत साहित्य की ओर आकृष्ट हुआ। उपनिषदों के सम्बन्ध में विचार आरम्भ करते ही उन्होंने अनुभव किया कि उपनिषदों का यथार्थ मर्म समझने के लिए पहले उनसे पूर्व रचित वेद-मन्त्र और ब्राह्मण भाग पर विचार करना आवश्यक है। इस प्रकार उपनिषदों से उन्होंने वेद चर्चा के लिए प्रेरणा प्राप्त की।

शोपेन हॉवर के बाद अनेकों पाश्चात्य विद्वानों ने उपनिषद् पर विचार करके विभिन्न प्रकार से उसकी महिमा गायी है। किसी- किसी ने तो उपनिषद् को 'मानव चेतना का सर्वोच्च फल' बतलाया है। स्वनामधन्य वेदज्ञ मैक्समूलर ने एक स्थान पर लिखा है कि 'यदि शोपेन हॉवर के इन (उपनिषद् सम्बन्धी)

शब्दों के लिए किसी समर्थन की आवश्यकता हो, तो मैं अपने जीवन भर के अध्ययन के आधार पर प्रसन्नता पूर्वक अपना समर्थन दूँगा। उन्होंने अपनी पुस्तक "India what can it teach us" में लिखा है-

"मृत्यु के भय से बचने, मृत्यु के लिए पूरी शक्ति से तैयारी करने और सत्य को जानने के इच्छुक जिज्ञासु के लिए उपनिषदों के अतिरिक्त और कोई श्रेष्ठ मार्ग मेरी दृष्टि में नहीं है। उपनिषदों के ज्ञान से मुझे अपने जीवन के उत्कर्ष में भारी सहायता मिली है। मैं उनका ऋणी हूँ। ये उपनिषदें आत्मिक उन्नति के लिए विश्व के धार्मिक साहित्य में अत्यन्त सम्मानास्पद रही हैं और आगे सदा रहेंगी। यह ज्ञान, महान् मनीषियों की महान् प्रज्ञा का परिणाम है। एक न एक दिन भारत की यह श्रेष्ठ विद्या यूरोप में प्रकाशित होगी और तब हमारे ज्ञान एवं विचारों में महान् परिवर्तन उपस्थित होगा।"

"Dogmas of Budhism" नामक ग्रन्थ के लेखक श्रीह्यम ने लिखा है- सुकरात, अरस्तू, अफलातून आदि कितने दार्शनिकों के ग्रन्थ मैंने ध्यान पूर्वक पढ़े हैं, पर जैसी शान्तिमयी आत्मविद्या मैंने उपनिषदों में पायी, वैसी और कहीं देखने को नहीं मिली।

"Is God knowoble" नामक ग्रन्थ में उसके रचयिता प्रो० जी० आर्क ने लिखा है- "मनुष्य की आत्मिक, मानसिक और सामाजिक गुत्थियाँ किस प्रकार सुलझ सकती हैं, इसका ज्ञान उपनिषदों से ही मिल सकता है। यह शिक्षा इतनी सत्य, शिव और सुन्दर है कि अन्तरात्मा की गहराई तक उसका प्रवेश होता है। जब मनुष्य सांसारिक दुःखों और चिन्ताओं से घिरा हो, तो उसे शान्ति और सहारा देने के अमोघ साधन के रूप में उपनिषद् ही सहायक हो सकती है।"

दाराशिकोह ने अपने फारसी उपनिषद् अनुवाद की भूमिका में लिखा है-" आत्मविद्या के मैंने बहुत ग्रन्थ पढ़े, पर परमात्मा के खोज की प्यास कहीं न बुझी। हृदय में ऐसी अनेकों शंकाएँ और समस्याएँ उठती थीं, जिनका समाधान ईश्वरीय ज्ञान के अतिरिक्त और किसी प्रकार सम्भव न था। मैंने कुरान, तौरेत, इञ्जील, जबुर आदि ग्रन्थ पढ़े, उनमें ईश्वर सम्बन्धी जो वर्णन है, उनसे मन की प्यास न बुझी। तब हिन्दुओं की ईश्वरीय पुस्तकें पढ़ीं। इनमें से उपनिषदों का ज्ञान ऐसा है, जिससे आत्मा को शाश्वत शान्ति तथा सच्चे आनन्द की प्राप्ति होती है। हजरत नवी ने भी एक आयत में इन्हीं प्राचीन रहस्यमय पुस्तकों के सम्बन्ध में संकेत किया है।"

उपनिषद्-दर्शन अथवा मौलिक वेदान्त के विख्यात व्याख्याता पॉल डायसन के अनुसार 'वेदान्त (अर्थात् उपनिषद्-दर्शन) अपने अविकृत रूप में शुद्ध नैतिकता का सशक्ततम आधार है, जीवन और मृत्यु की पीड़ाओं में सबसे बड़ी सान्त्वना है। भारतीयो! इसमें निष्ठा रखो।'

भारतीय आचार, विचार और साहित्य संस्कृति के प्रति अगाध निष्ठा रखने वाली विदुषी महिला डॉ० एनीबेसेंट ने उपनिषद् विद्या की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि 'भारत का ज्ञान मानव चेतना की सर्वोच्च देन है।'

उपनिषद्-ज्ञान के प्रचार-प्रसार में संस्कृतज्ञ विद्वान् बेवर साहब का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने जर्मन भाषा में एक पुस्तक सत्रह भागों में लिखी है, जिसका नाम है 'इण्डिशे स्टूडियन'। उसका प्रथम भाग १८५० ईस्वी में बर्लिन से प्रकाशित हुआ था। इस भाग में बेवर महोदय ने 'सिर्र-ए-अकबर' (ले० दाराशिकोह) की चौदह उपनिषदों को शुद्धता से सम्पादित कर प्रकाशित किया है। इसका दूसरा भाग बर्लिन से ही १८५३ ई० में प्रकाशित हुआ। उसमें १४ से ३९ संख्या तक के उपनिषद् प्रकाशित किये गये हैं।